पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय

[सं० १९८० वि० में]

संपादक—

श्रीदुलारेलाल भार्गव

श्रीरूपनारायण पांडेय

चवन्नी-चरितावली—संख्या ३

पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय

[उनकी जीवनी और रचना]

लेखक

दयाशंकर मिश्र

प्रकाशक

गंगा-पुस्तकमाला कार्यालय
२९-३०, अमीनाबाद-पार्क

लखनऊ

१९८०

मूल्य ।)

प्रकाशक
श्रीछोटेलाल भार्गव बी० एस्-सी०, एल्-एल्० बी०
गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय
लखनऊ

मुद्रक
श्रीकेसरीदास सेठ
नवलकिशोर-प्रेस
लखनऊ

पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय

(सं० १९५५ वि० में)

महाकवि

पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरिऔध"

विषय-प्रवेश

इस संसार में उसी मनुष्य का जन्म लेना सफल है, जिसके जन्म लेने से उसके वंश की मर्यादा बढ़े, जिसके सदाचारों के आदर्श से पूर्वजों का मुख उज्ज्वल हो, जिसके पुनीत जीवन का अमूल्य समय देशोपकारी और समाज-हितकर कार्यों में व्यतीत होता हो, और जिसके आदरणीय गुणों का आश्रय लेकर साधारण-से-साधारण मनुष्य भी सच्चरित्र बन सके। जिन महानुभाव का चरित्र मैं आज आप लोगों के सामने उपस्थित करता हूँ, वह ऐसे ही एक महापुरुष

हैं। सर्व-सम्मति से आगामी चतुर्दश हिंदी-साहित्य-सम्मेलन, दिल्ली के मनोनीत सभापति, हिंदी-संसार के चिर-परिचित, प्रसिद्ध साहित्य-सेवी, साहित्यरत्न पंडित अयोध्यासिंहजी उपाध्याय की यह जीवनी अवश्य ही हिंदी-संसार में यथोचित सम्मान प्राप्त करेगी।

वंश-परिचय

उपाध्यायजी अगस्त्यगोत्रीय, शुक्ल-यजुर्वेदीय, सनाढ्य-ब्राह्मण हैं। आपका घराना चिरकाल से प्रतिष्ठित रहा है, और वह पूर्वजों की प्रतिष्ठा अब तक अक्षुण्ण चली आ रही है। आपके वंश में बड़े-बड़े विद्वानों ने जन्म लिया है। आपके पूर्वज विद्या से ही नहीं, दुर्लभ राज-सम्मान से भी सम्मानित रहे हैं। श्रीमान् पं० ब्रह्मासिंहजी उपाध्याय, जो हमारे चरित्र-नायक के पितृव्य और विद्या-गुरु भी थे, इस ज़िले के परम प्रतिष्ठित और प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् हो गए हैं।

उपाध्यायजी के पूर्व-पुरुष बदायूँ के रहनेवाले थे। राजरोष-भाजन एक कायस्थ-परिवार की

रक्षा करने के कारण उनको भी राजा के कोप का पात्र बनना पड़ा। अब से तीन सौ बरस पहले आपके पूर्वज उस कायस्थ-परिवार के साथ वहाँ से सपरिवार निज़ामाबाद भाग आए थे। निज़ामाबाद ज़िला-आज़मगढ़ में तमसा-नदी के किनारे बसा हुआ एक प्रसिद्ध क़सबा है। इस परिवार की जीविका ज़मींदारी और वंशपरंपरागत पांडित्य है।

उपाध्यायजी के पूर्व-पुरुषों में पं० काशीनाथ-जी उपाध्याय अपने समय के एक उच्च राज-कर्म-चारी थे; किंतु कुछ धार्मिक विरोध उपस्थित होने पर उनको अपना यह प्रतिष्ठित पद त्याग देना पड़ा था।

बाल्यकाल और शिक्षा

श्रीमान् पं० ब्रह्मासिंहजी उपाध्याय की चर्चा ऊपर की गई है। आप तीन भाई थे। सबमें बड़े आप ही थे। आपसे छोटे श्रीमान् पं० भोला-सिंहजी उपाध्याय और सबसे छोटे श्रीमान् पं० बनारसीसिंहजी उपाध्याय थे। पं० भोलासिंहजी उपाध्याय हमारे चरित्र-नायक के पिता और

श्रीमती रुक्मिणी देवी माता थीं। ग़ाज़ीपुर-शहर में श्रीमान् पंडित चंद्रशेखरजी पांडेय एक प्रतिष्ठित पुरुष और विख्यात ज्योतिर्विद् थे। श्रीमती रुक्मिणी देवी उन्हीं की छोटी कन्या थीं। आप एक विदुषी महिला थीं। आपकी धर्म-निष्ठा अब तक निज़ामाबाद में प्रसिद्ध है। हमारे चरित्र-नायक पर आपके पवित्र जीवन का बहुत प्रभाव पड़ा है। श्रीमान् पं० भोलासिंहजी उपाध्याय एक राजनीतिज्ञ, कर्मठ और कार्य-कुशल पुरुष थे। ग्राम में कोई ऐसा धर्म-कार्य अथवा सामाजिक कृत्य नहीं होता था, जिसके आप आधार-स्तंभ न हों। आपका जीवन परोपकार-निरत और उदार था। हमारे चरित्र-नायक हरिऔधजी का जन्म वैशाख-कृष्णा तृतीया, सं० १९२२ विक्रमीय में हुआ था। आपकी शिक्षा-दीक्षा श्रीमान् पंडित ब्रह्मासिंहजी उपाध्याय के द्वारा संपन्न हुई। यह शिक्षा अधिकतर संस्कृत और धार्मिक विषयों से संबंध रखती थी। इसके सिवा आपने उर्दू, फ़ारसी, बँगला और पंजाबी

भाषाओं की भी शिक्षा पाई है ; हिंदी मिडिल-नार्मल और क़ानूनगोई की परीक्षाएँ भी पास की हैं। हिंदी की मिडिल-परीक्षा पास करने के पश्चात् आपने कुछ काल तक बनारस के क्विन्स कॉलेज में अँगरेज़ी-शिक्षा भी प्राप्त की है ; किंतु स्वास्थ्य-भंग हो जाने के कारण यह शिक्षा चिरस्थायी नहीं हुई। आप जानते तो कई भाषाएँ हैं, किंतु विशेष अनुराग संस्कृत और हिंदी से ही रखते हैं। आपने इन दोनों भाषाओं में कितनी योग्यता प्राप्त की है, इसको आपके पांडित्य-पूर्ण ग्रंथ ही बतला रहे हैं। इस विषय में मेरा कुछ विशेष लिखना सूर्य को दीपक द्वारा दिखलाना होगा। आपकी विद्वत्ता प्रगाढ़, चिंता-शक्ति सार्वदेशिक और हिंदू-शास्त्रों की व्युत्पत्ति बहुमूल्य है। जिसको कभी आपसे मिलने का अवसर प्राप्त हुआ है, और जिसने आपके प्रसिद्ध ग्रंथों को मन लगाकर पढ़ा है, वह स्वयं इस बात को स्वीकार करेगा। मेरा विशेष कथन बाहुल्य-मात्र होगा।

कार्य-क्षेत्र

उपाध्यायजी के पितृदेव एक बड़े उत्साह-शील और अध्यवसायी पुरुष थे। उन्हीं की इच्छा और उद्योग से उपाध्यायजी को एक सरकारी पाठशाला में पहले-पहल अध्यापक नियुक्त होना पड़ा। आपका कार्य, योग्यता और पांडित्य देख-कर शिक्षा-विभाग के उच्च कर्मचारी आपसे सदैव बहुत प्रसन्न रहे। उसी के फल-स्वरूप आपकी पदोन्नति बराबर होती गई। इस समय आप सदर-क़ानूनगोई के पद पर प्रतिष्ठित हैं। संस्कृत का एक विद्वान् कहता है—

"नरपतिहितकर्त्ता द्वेष्यतां याति लोके,
जनपदहितकर्त्ता त्यज्यते पार्थिवेन्द्रैः;
इति महति विरोधे वर्त्तमाने समाने,
नृपतिजनपदानां दुर्लभः कार्यकर्त्ता।"

"नरपति का हित करनेवाला जनता के द्वेष का भाजन और प्रजा का हितकारी राजा के द्वारा तिरस्कृत होता है। ऐसे महाविरोध की दशा में राजा और प्रजा दोनों को प्रसन्न रखकर कार्य

करनेवाला मनुष्य दुर्लभ है।" हमारे चरित्र-नायक ऐसे ही दुर्लभ मनुष्य हैं। आपने १५ वर्ष तक परगना नत्थूपुर, तहसील घोसी में, और ११ वर्ष तक ख़ास सदर आज़मगढ़ में, गिर्दावर-क़ानूनगोई की है। क़ानूनगो लोगों को जो अधि-कार प्राप्त हैं, वे अविदित नहीं; किंतु अधिकारारूढ़ होकर, एक उच्च पद का अधिकार पाकर, आपने जिस सहनशीलता, सौजन्य, औदार्य, न्याय-प्रियता, लोभहीनता और निष्पक्षभाव से कार्य किया है, उसकी पूर्ण प्रशंसा कर पाना असंभव है। आश्चर्य की बात तो यह है कि कलेक्टर साहब से लेकर तहसीलदार साहब तक कोई ऐसा उच्च कर्मचारी न होगा, जो आपकी कार्यकारिणी शक्ति, सामयिक योग्यता और नीति-प्रवीणता पर मुग्ध न हुआ हो। प्रजा-पक्ष की यह अवस्था है कि खोजने पर भी कोई आपका विरोधी न मिलेगा। प्रत्येक मामले में प्रतिपक्षियों को प्रसन्न रखना आपका आदर्श है। परगना नत्थूपुर बलिया-ज़िले की सीमा

पर है। वहाँ से आज़मगढ़ बहुत दूर है; किंतु कोई कठिन संकट उपस्थित होने पर, अथवा किसी गूढ़ और जटिल मामले की जटिलता बढ़ने पर, आज भी लोग आपसे उचित सम्मति लेने के लिये वहाँ से आते और पूरा लाभ उठाकर यशोगान करते हुए वापस जाते हैं।

मेरे साहब एक प्रतिष्ठित कलेक्टर हो गए हैं। वह राज-कर्मचारी के नाते तो आपकी प्रतिष्ठा करते ही थे, आपकी विद्वत्ता पर भी मुग्ध थे। उन्होंने आपके कैरेक्टर-रोल में अपनी लेखनी से यह लिखा है—

"He is a very well educated man, who is also scholar and author."

इसका अर्थ यह है कि आप सुशिक्षित, विद्वान् और ग्रंथकार हैं। अब तक उपाध्यायजी अपने कार्य-क्षेत्र में स्वाभाविक योग्यता से कार्य करते हुए यश और कीर्ति का उपार्जन कर रहे हैं। आपका कार्य-काल व्यतीत होने पर समय

बतलावेगा कि आप इस क्षेत्र में क्या और कौन थे। *

साहित्य-क्षेत्र

उपाध्यायजी का यही प्रधान क्षेत्र है। आप चिर-काल से इस क्षेत्र में अत्यंत तत्परता और भावुकता के साथ कार्य कर रहे हैं। इस समय वृद्धावस्था में भी आप अनवरत साहित्य-सेवा में निरत हैं।

श्रीमान् पं० ब्रह्मासिंहजी उपाध्याय प्रसिद्ध ज्योतिर्विद् ही न थे, बल्कि सकल शास्त्र-पारंगत एक सदाचारनिष्ठ विद्वान् भी थे। आपका साहित्यिक ज्ञान भी अगाध था। उपाध्यायजी उन्हीं की प्रतिमूर्ति हैं।

उक्त महानुभाव ने जैसे उपाध्यायजी को समस्त शास्त्रों की शिक्षा दी, वैसे ही उन्हें साहित्य में भी व्युत्पन्न बनाया। उपाध्यायजी ने अपने काव्योपवन-ग्रंथ में उक्त महोदय के विषय में यह लिखा है—

---

* १ नवंबर, सन् १९२३ ई० से उपाध्यायजी ने पेंशन ले ली है। अब आप हिंदी की सेवा में ही अपना सारा समय लगावेंगे।—संपादक

बिबुध-बृंद बंदित बिबिध, बिरद-बिभूषित जोय ;
ब्रह्म-बिदित बेदांत-रत, जयति ब्रह्महरि कोय ।
निगुन निगुनता मैं लखत, सगुन सगुनता जौन ;
बिना ब्रह्महरि को जगत, सब सदगुन को भौन ?
जो न गिरा गंभीर तव, करति ब्रह्महरि काम,
बनतो कैसे काम को, तौ हरिऔध निकाम ?
कृपा तिहारी ब्रह्महरि, जो न होति भरपूर,
मिलत न तौ हरिऔध-लौं, खोजे हूँ कहुँ कूर ।
सजतन जो नहिं ब्रह्महरि, करतो मत न बखान,
कैसे जानत जगत-गति, तौ हरिऔध अजान ?

लालन-पालन प्यार सों कीनो, अबोधता बालपने की परेखी ;
बिद्या दई, बहु मान दयो, उपजाई परेस की प्रीति बिसेखी ।
मोहित औधहरी-मति होति है, ब्रह्महरी तौ महानता पेखी ;
कानन केती कृपालुता हौं सुनी, तेरी दयालुता आँखिन देखी ।

साहित्य-शास्त्र में सुशिक्षित होने पर उपाध्यायजी की दृष्टि समय-प्रवाह के अनुकूल अपनी मातृ-भाषा हिंदी की ओर विशेष आकृष्ट हुई । उस समय भारतेंदु बाबू हरिश्चंद्रजी की 'चंद्रिका' चमक रही थी, और उनकी 'कवि-वचन-सुधा'

हिंदू-संसार को संजीवनी-शक्ति प्रदान कर रही थी। निज़ामाबाद में श्रीयुत बाबा सुमेरसिंहजी हिंदी-भाषा के एक प्रसिद्ध कवि और विद्वान् हो गए हैं। उन दिनों उक्त दोनों पत्र बाबाजी के यहाँ आते थे। उन्हीं की कृपा से वे पत्र हमारे चरित्र-नायक को देखने के लिये बराबर मिलते रहे। अतएव उनके प्रभाव से प्रभावित होकर हिंदी-साहित्य की ओर आपका अनुराग विशेष बढ़ा। आपकी हिंदी-कविता का काल उस समय से आरंभ होता है, जब आपकी अवस्था १६ वर्ष की भी नहीं हुई थी। पूज्य पितृव्य-चरण प्रतिदिन आपके साहित्य-ज्ञान की वृद्धि करते थे, और समय-समय पर मान्य बाबाजी उत्साह-दान करने में नहीं चूकते थे। अतएव युवावस्था आरंभ होने के प्रथम ही उपाध्यायजी की ग्रंथ-रचना आरंभ हो गई थी। अब तक आपने ३१ ग्रंथ लिखे हैं, जिनमें महाकाव्य 'प्रिय-प्रवास' और अद्भुत नीति-ग्रंथ 'बोल-चाल'-जैसे बड़े-बड़े ग्रंथ भी हैं। उपाध्यायजी की अधिकांश पुस्तकें मुद्रित हो चुकी

हैं। जो पुस्तकें अब तक मुद्रित नहीं हुई, उनके भी शीघ्र मुद्रित हो जाने की आशा है। उपाध्याय-जी की लेखनी ने साहित्य के प्रत्येक अंग की पूर्ति की है। आपकी ग्रंथावली में दो नाटक, आठ उपन्यास, पाँच नीति के ग्रंथ और शेष काव्य-ग्रंथ हैं। जिस समय आपने अपना कार्य आरंभ किया था, उस समय व्रज-भाषा का ही अखंड राज्य था। आपकी कविता का आधा भाग व्रज-भाषा की रचना है। व्रज-भाषा की कविता-पुस्तकों में से कुछ प्रकाशित हो चुकी हैं, और कुछ अभी अप्रकाशित हैं। व्रज-भाषा पर आपका कैसा अधिकार है, और आपने उस भाषा का कैसा परिशीलन किया है, यह आपकी प्रौढ़ रचनाएँ ही बतलावेंगी। मैं आगे चलकर कुछ कविताएँ आप लोगों की सेवा में उपस्थित करूँगा। जब खड़ी बोली की कविता की चर्चा चली, तब आपकी दृष्टि इधर आकृष्ट हुई। आपने समय की गति देखी, और समझा कि खड़ी बोली की कविता आदरणीय हुए बिना नहीं रहने की; क्योंकि सामयिक गद्य के

वह अधिकतर अनुकूल है। आपने खड़ी बोली के मैदान में उतरकर जो कार्य किया है, उसका समस्त हिंदी-संसार साक्षी है। आपका परम प्रसिद्ध महाकाव्य 'प्रिय-प्रवास' खड़ी बोली की एक अद्भुत और अशेष-गुण-संपन्न रचना है। इस ग्रंथ ने हिंदी-संसार में एक नए युग की सूचना दी है, और यह आधुनिक समस्त कवियों के लिये आदर्श है। प्रिय-प्रवास ही नहीं, हाल में जो 'बोल-चाल' नाम का एक अद्भुत नीति-ग्रंथ आपने लिखा है, वह क्या भाषा, क्या भाव और क्या कवित्व-गुण, सभी बातों में आदर्श है। यह ग्रंथ साढ़े तीन सहस्र पद्यों में समाप्त हुआ है। आज-कल हिंदी-भाषा का जो रूप वर्तमान हिंदू-समाज स्थिर करना चाहता है, यह ग्रंथ उसी का नमूना है। इस ग्रंथ की भाषा इतनी सरल है कि उससे सरल भाषा हो ही नहीं सकती। कोई संस्कृत और अरबी-फ़ारसी इत्यादि का अप्रचलित शब्द इस ग्रंथ में नहीं आया। वे ही शब्द इस रचना में आए हैं, जिनको एक साधारण मनुष्य भी

समझ सकता है, या जिनको ठेठ-हिंदी के शब्द कह सकते हैं। इस रचना को आप यदि हिंदी में छाप देंगे, तो वह हिंदी कही जायगी, और यदि उर्दू में प्रकाशित कर देंगे, तो वह उर्दू बन जायगी। यह मैं स्वीकार करूँगा कि रचना का ढंग अधिकांश हिंदी-प्रणाली का है; किंतु भाषा की दृष्टि से यदि यह रचना देखी जाय, तो हिंदी और उर्दू का भेद नाम-मात्र दिखलाई देगा। इतनी सरलता होने पर भी यह ग्रंथ लालित्य, अनुप्रास, यमक और भाव-सौंदर्य का आकर है। आज तक मुहावरों की कोई पुस्तक हिंदी या उर्दू में नहीं लिखी गई। इस पुस्तक में बाल से तलवे तक तमाम अंगों के मुहावरे लिख दिए गए हैं। साथ ही और भी बहुत-से मुहावरे प्रयोजन-सूत्र से आ गए हैं, जो ग्रंथ-सौंदर्य-संपादन के हेतु ही नहीं, बल्कि उसके उत्कर्ष के साधन भी हैं। यह ग्रंथ भी हिंदी में अपने ढंग का बिलकुल नया है। जिस समय यह प्रकाशित होगा, उस समय प्रिय-प्रवास के समान हिंदी-संसार में युगांतर उपस्थित कर देगा।

हिंदी-गद्य लिखने की भी आप अद्‌भुत क्षमता रखते हैं। आपकी 'ठेठ हिंदी का ठाट' और 'अध-खिला फूल' नाम की रचनाएँ ऐसी सरल हिंदी का नमूना हैं, जिससे सरल हिंदी हो नहीं सकती। इतनी सरलता होने पर भी उसमें कुछ ऐसी दुरूहता है कि आज तक कोई उसका अनुकरण न कर सका। प्रचलित हिंदी का प्रौढ़, सुललित और ओजस्वी स्वरूप देखना हो, तो कबीर-वचनावली और प्रिय-प्रवास की सुंदर भूमिकाओं और आपके 'उद्‌बोधन' तथा 'रुक्मिणी-परिणय'-नामक ग्रंथों को देखिए। ये भूमिकाएँ बहुत ही गंभीर, सरस और मनोहर हैं। रुक्मिणी-परिणय और उद्‌बोधन का शब्द-विन्यास कितना ललित और आकर्षक है, आप स्वयं इनको पढ़कर इस बात का अनुभव कर सकते हैं।

उपाध्यायजी का हिंदी-साहित्य में स्थान

मेरा विचार है कि हिंदी के वर्तमान लेखकों में आप ही एक ऐसे लेखक हैं, जो सरल-से-सरल और कठिन-से-कठिन हिंदी-गद्य-पद्य लिख सकते

हैं। आप खड़ी बोली ही के गद्य-पद्य लिखने में सिद्धहस्त नहीं हैं, व्रज-भाषा के गद्य-पद्य लिखने में भी वैसे ही दक्ष हैं। संभव है, मेरे इस कथन में कुछ अनुचित पक्षपात समझा जाय, अतएव मैं कुछ हिंदी-साहित्य के प्रसिद्ध विद्वानों और मर्मज्ञों की सम्मतियाँ यहाँ पर उद्धृत कर देना चाहता हूँ, जिनसे आप लोग यह समझ सकेंगे कि मेरा विचार कहाँ तक न्याय-संगत है।

श्रीयुत बाबू काशीप्रसादजी जायसवाल एम्० ए० निज-संपादित, बिहार-प्रांत के प्रतिष्ठित साप्ताहिक पत्र पाटलिपुत्र के ११ जुलाई, सन् १९१४ के अंक में महाकाव्य प्रिय-प्रवास की आलोचना करते हुए लिखते हैं—"उपाध्याय-जी ने कुछ वर्ष हुए, एक नई शैली की हिंदी अपने दिल में पैदा की। ठेठ हिंदी का ठाट और अध-खिला फूल उसके उदाहरण हैं। उपाध्यायजी की ठेठ भाषा इतनी सहल है कि उससे सहल लिखना असंभव है। किंतु लिखने में इतनी कठिन है कि दूसरे किसी ने अनुकरण की हिम्मत न

की। उपाध्यायजी को साहित्य में नए राज्य स्थापित करना छोड़ दूसरी बात पसंद ही नहीं आती। काशी की नागरी-प्रचारिणी-सभा का एक उत्सव था। आप उस समय मिर्ज़ापुर से वहाँ जा रहे थे। एक कविता लिखना विचारा, वह कविता जब लिखी गई, तो एक नई चीज़ थी। बरसों तक उसकी चर्चा होती रही। उसका अनूठापन लोगों को घबराता था, पर उस शैली का बहुत अनुकरण हुआ।" काव्य-भूषण और हिंदी के प्रसिद्ध कवि श्रीयुत पं० लोचनप्रसाद पांडेयजी अगस्त, सन् १६१५ के स्वदेश-बांधव में लिखते हैं—"उपाध्यायजी की सरस और हृदय-ग्राही स्फुट कविताओं के पाठ से हमें उनके एक सुकवि होने का पूर्ण विश्वास था; पर हमें इस बात का ध्यान न था कि उनकी प्रतिभा, कार्य-कारिणी-शक्ति में, हिंदी-साहित्य-संसार-भर में अधिक बलवती है, और यह कि वह खड़ी बोली के नव युग में हम लोगों का आदर्श बनकर मार्ग-प्रदर्शक हो सकेगी। गद्य लिखने में, नई

शैली की हिंदी लिखने में, हरिऔधजी हिंदी-संसार में अद्वितीय हैं।"

प्रसिद्ध मासिक पत्र विद्यार्थी के संपादक उसकी संवत् १९७३ के आश्विन मास की संख्या में लिखते हैं—"हिंदी के वर्तमान महाकवियों में साहित्य-रत्न पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय का नाम बड़ी प्रतिष्ठा के साथ लिया जाता है। उपाध्याय-जी की कविता बड़ी ही सरस और सरल होती है। हिंदी-लेखकों में आप ही एक ऐसे गद्य-पद्य-लेखक हैं, जिनके विषय में निस्संकोच कहा जा सकता है कि ठेठ हिंदी के शब्दों का तो मानो आपने ठेका ही ले रक्खा है।"

'पद्य-प्रमोद' की भूमिका में हिंदी-साहित्य-मर्मज्ञ श्रीयुत पं० रामदहिन मिश्रजी काव्य-तीर्थ लिखते हैं—"उपाध्यायजी कैसे काव्य-कला-कुशल, शब्द-शिल्पी, सत् कवि और सुलेखक हैं, यह हिंदी-संसार विशेष रूप से जानता है। आपका पांडित्य प्रगाढ़, बुद्धि विलक्षण, विचार उत्तम, कविता-शक्ति निस्सीम और प्रतिभा अप्रतिहत

है। हिंदी तो आपकी अनुगामिनी-सी ज्ञात होती है। आप उसे जिस साँचे में ढालना चाहते हैं, ढाल देते हैं। कोई भी मर्मज्ञ पाठक हिंदी-संसार में नव-नव युग-प्रवर्तक और नई-नई सृष्टि के स्रष्टा उक्त उपाध्यायजी के ठेठ हिंदी का ठाट और अधखिला फूल-से सरस और शिक्षा-प्रद उपन्यास, प्रिय-प्रवास-सा महाकाव्य और इन ग्रंथों की तथा कबीर-वचनावली की विवेक और पांडित्य से पूर्ण, शत-शत पत्र से भी अधिक भूमिका पढ़कर मेरी उक्तियों को अत्युक्तियों में परिणत नहीं करेगा। आपकी प्रशंसा मुक्तकंठ से क्या देशी और क्या विदेशी, सभी साहित्य-सेवियों ने की है। आपकी गणना महाकवियों में होती है।"

श्रीमान् पं० वेंकटेशनारायण त्रिपाठी एम्० ए० द्वारा संपादित, हिंदी का परम प्रसिद्ध पत्र अभ्युदय अपनी २२ दिसंबर, सन् १९१४ की संख्या में प्रिय-प्रवास की आलोचना करते हुए लिखता है—"अतुकांत-छंदों में कविता रचने का हिंदी

में यह पहला ही प्रबल प्रयत्न है । हम यह कहने का साहस करते हैं कि तुकांत-काव्य के इतिहास में कवि चंद बरदाई का जो स्थान और हिंदी-गद्य में लल्लूलालजी को जो गौरव प्राप्त है, वही स्थान और गौरव प्रिय-प्रवास के बदौलत अतुकांत-काव्य की गाथा में उपाध्यायजी को उस समय तक दिया जायगा, जब तक हिंदी-साहित्य में नवीनता और सजीवता का आदर है। इसमें कोई संदेह नहीं कि हिंदी-साहित्य में प्रिय-प्रवास ने एक महत्त्व-पूर्ण नवीन युग का आरंभ किया है। इसने हिंदी की सजीवता और सबलता प्रमाणित कर दी ; उसको संसार के जीते-जागते साहित्य की श्रेणी में अब उच्च स्थान मिलेगा। प्रिय-प्रवास अतुकांत-छंदों में हिंदी का प्रथम महाकाव्य है। इसका अर्थ यह है कि पुष्य कवि से लेकर उपाध्यायजी के पूर्व तक किसी भी हिंदी के कवि ने इस विस्तार के साथ अतुकांत-कविता नहीं रची। उपाध्यायजी के पहले किसी आचार्य ने इस छंद में महाकाव्य नहीं रचा। हिंदी के

जन्म से लगभग चौदह सौ वर्ष तक तुकबंदी की तूती बोलती रही। संस्कृत-साहित्य का गौरव इसी में है कि वह इस भारी दूषण से बचा है। संसार के आधुनिक साहित्य में तुक का स्थान बहुत ही गौण है। बँगला, उर्दू और मराठी में अतुकांत-काव्य बराबर रचे जाते हैं, और नए-नए छंदों का उन साहित्यों में निरंतर जन्म होता रहता है। अकेला हिंदी-साहित्य ही परंपरा की शृंखला में जकड़ा पड़ा था। इस अस्वाभाविक और हानिकारक दासत्व को तोड़कर स्वच्छंद विचरने का पहले-पहल साहस उपाध्यायजी ने किया है। उन्होंने यह भी दिखला दिया कि कविता की उत्तमता तुक-बंदी पर ही नहीं निर्भर है।"

उपाध्यायजी ने हिंदी-साहित्य-क्षेत्र में जो आदर्श उपस्थित किया है, वह सर्वथा नूतन और निराला है। जिस समय अनुकरण-प्रियता का प्रवाह बह रहा है, मौलिकता के लाले पड़े हुए हैं, लोग दो-चार सौ पद्यों के ग्रंथ लिखकर आचार्य-पद के अधिकारी हो रहे हैं, अँगरेज़ी के छोटे-मोटे ग्रंथों

के पद्यमय अनुवाद करके लोग समझ रहे हैं कि हमारी समता करनेवाला कौन है, जिस समय सरस, ओजमयी, भाव-पूरित और हृदय-ग्राहिणी रचनाओं का एक प्रकार से अभाव हो रहा है, उस समय उपाध्यायजी ने हिंदी-गद्य-पद्य-साहित्य के क्षेत्र में क्या कार्य किया है, उसको आप लोग उनके सुंदर, सरस और भावमय ग्रंथ देखकर स्वयं जान सकते और जानते हैं। मैं इस विषय में विशेष लिखकर लेख को बढ़ाना नहीं चाहता।

आदर और सम्मान

उपाध्यायजी की स्वतंत्र जीविका है, और व्रत यथालाभ-संतोष। इसलिये आपने कभी इस बात की इच्छा नहीं की कि किसी राजदरबार का आश्रय लें, और किसी राजे-महाराजे का अयथा-गुण-गान कर धन और कीर्ति का संचय करें। आप निस्स्वार्थ भाव से हिंदी देवी की सेवा करते आए हैं, और आज भी कर रहे हैं। इस लालसा से कि वह विख्यात हों, उनका नाम हो, वह कोई उपाधि प्राप्त करें, अथवा कोई पुरस्कार प्राप्त कर

अपनी योग्यता का डिंडिम-नाद करें, उन्होंने कभी कोई कार्य नहीं किया ; किंतु—

"जिमि सुख-संपति बिनहिं बुलाए,
धर्मसील पहँ जाहिं सुभाए।"

उसी प्रकार आपको बिलकुल निरपेक्ष रहने पर भी यश, कीर्ति और सम्मान प्राप्त हुआ। उचित उपाधियाँ भी आपके नाम के साथ लगीं, पदक भी मिले। और, इसके अतिरिक्त हिंदी-संसार के सहृदयों द्वारा वे उपाधियाँ भी प्राप्त हुईं, जो उनके गौरव का वास्तविक चिह्न हैं। आपकी गद्य-रचना की प्रशंसा मैं ऊपर कर चुका हूँ। आपके रुक्मिणी-परिणय नाटक का गद्य इतना सुंदर और हृदय-ग्राही है कि महाराज छत्रपुर उसको पढ़कर विमुग्ध हो गए। बहुत काल तक यह नाटक प्रतिवर्ष उनके यहाँ खेला गया। इसकी रचना-माधुरी से उक्त महाराज इतने आकर्षित हुए कि उन्होंने अपने हाथ से पत्र लिखा, अपने मुख्य-सेवक को भेजकर अपने यहाँ उपाध्याय-जी को आग्रह-पूर्वक बुलाया और बहुत कुछ

आदर-सम्मान किया। आपको उक्त महाराजा साहब सवा सौ रुपए मासिक पर अपने यहाँ का अफ़सर-माल नियत करना चाहते थे; किंतु इस भय से कि राजदरबार में रहने से हिंदी-सेवा का अवसर यथोचित न मिलेगा, तथा कुछ और कारणों से आपने इस पद को स्वीकार नहीं किया। भारतधर्म-महामंडल ने अपने संवत् १९७२ के महाधिवेशन में, जिसके सभापति महाराजा विजयसिंह डूँगर-पुराधिपति के० सी० एस० आई० थे, उक्त सभापतिजी के ही हस्ताक्षर से आपको एक मानपत्र अर्पण किया, और आपकी साहित्यिक योग्यता का विचार करके आपको साहित्य-रत्न की उपाधि दी। इस अवसर पर इलाहाबाद के प्रसिद्ध विद्यार्थी मासिक पत्र ने, आश्विन, संवत् १९७३ वि० की संख्या में, जो लिखा है, वह भी नीचे उद्धृत किया जाता है—

"आपको भारतधर्म-महामंडल ने पिछले दिनों साहित्य-रत्न की उपाधि से विभूषित किया है। उपाध्यायजी तो हिंदी-सेवियों के हृदय से पहले

ही यह उपाधि प्राप्त कर चुके हैं । अच्छा हुआ, उपाध्यायजी के प्रसिद्ध नाम के साथ लग जाने के कारण महामंडल की यह उपाधि भी भूषित और सफल हो जायगी ।"

भारतधर्म-महामंडल ही ने संवत् १९७५ वि० में मिथिलाधिपति दरभंगा-नरेश द्वारा एक रजत-पदक भी आपको दिया है । सबसे बढ़कर महत्त्व उस उपाधि का है, जिसको हिंदी-साहित्य के कुछ सहृदयों ने स्वतः दिया है । वह उपाधि कवि-सम्राट् की है, जो आजकल उपाध्यायजी के नाम के साथ किसी-किसी हिंदी-पत्र में लिखी जाती है । रायबहादुर बाबू मुकुंदलालजी आज़मगढ़-ज़िले के एक प्रतिष्ठित धन-कुबेर हैं । आप सुप्रसिद्ध श्रीयुत राजा मोतीचंदजी सी० आई० ई० के भतीजे हैं । हिंदी-मर्मज्ञ भी हैं । आपने मानस-मुक्तावली-नामक एक ग्रंथ लिखा है । वह ग्रंथ आपने उपाध्यायजी को समर्पित किया है । उत्सर्ग-पत्र में आपने उनको सत्-साहित्य-रसिक, भाषा-भूषण, आदर्श-चरित,

धार्मिक-श्रेष्ठ, सर्व-प्रिय, हिंदी-हित-व्रती आदि लिखा है। वास्तव में उपाध्यायजी के ये वास्तविक विशेषण हैं। कारण, एक निरपेक्ष व्यक्ति द्वारा दिए गए हैं। अतएव मेरी दृष्टि में इनका बहुत आदर है, और इसीलिये मैंने इनका यहाँ उल्लेख किया है।

जीवन-यात्रा

उपाध्यायजी अत्यंत सरल चित्त के विद्या-व्यसनी पुरुष हैं। आपके रहन-सहन की प्रणाली सादी, स्वभाव मिलनसार और उदार है। बखेड़ा और झंझट आपको पसंद नहीं। कलह प्रियता आपसे कोसों दूर रहती है। आपकी इस प्रवृत्ति का आपकी जीवन-यात्रा पर बड़ा प्रभाव है। आप या तो सरकारी काम करते देखे जायँगे, या अपने कविता-कुंज में बैठे कलित कुसुम-चयन करते दृष्टिगोचर होंगे। आपके सिर पर सरकारी कार्य का गुरु भार है। उसका यथोचित संपादन करके आप किस प्रकार अपने कविता-कुंज में आ बैठते हैं, यह सोचकर आश्चर्य होता

है। कोई मनुष्य दिन का अधिकांश भाग गुरु कार्य में व्यतीत कर किसी दूसरे कार्य में अपना जी नहीं लगा सकता, और न कठिन परिश्रम करने के बाद फिर अपना सिर किसी जटिल विषय में खपा सकता है; किंतु आपका विद्या-व्यसन आपसे दुस्तर कार्य भी करा देता है। आप अपने जीवन की सार्थकता इसी में समझते हैं कि कुछ पढ़ें-लिखें, हिंदी की सेवा करें, और कविता देवी की आराधना में तत्पर रहें। इसीलिये आपके अवकाश का समय इन्हीं पुण्य-कार्यों में व्यतीत होता है।

यदि उपाध्यायजी दुनियादार आदमी होते, और स्वार्थ पर दृष्टि रखते, तो अपनी पुस्तकों की आय से ही मालामाल हो जाते। पर आपने कभी इधर दृष्टि नहीं दी। अपनी पुस्तकों को छापने के लिये निस्स्वार्थ-भाव से लोगों को दिया, और देन-लेन की बात मुख पर भी नहीं लाए। अधिकांश हिंदी पत्र-संपादक आपसे समय-समय पर लेख और कविता माँगते रहते हैं। आप यथा-

वकाश सभी की इच्छा पूरी करते हैं। इस प्रकार आप बहुत-से लेख और कविताएँ अब तक दे चुके हैं ; परंतु पुरस्कार की कामना कभी हृदय में उत्पन्न नहीं हुई । आपकी उदारता के विषय में मैं इतना ही कहूँगा कि आपसे जब कभी किसी प्रकार की याचना की गई, आपने उसी समय यथाशक्ति उसकी पूर्ति की चेष्टा की । पंडित, विद्यार्थी तथा भिक्षुक, सब आपसे उपकृत होते रहते हैं। पर्याप्त आय न होने पर भी आप सदैव मुक्तहस्त रहते हैं। उपाध्यायजी हिंदू-समाज को समुचित सम्मति, हिंदी-संसार को ग्रंथरत्न, कवि-समाज को काव्य-शिक्षा और दीनों को यथा-शक्ति धन देने में अपना विशेष सौभाग्य मानते हैं। उनके प्रतिष्ठित द्वार से कोई याचक निराश नहीं जाने पाता। उन्होंने किसी का दिल तोड़ना सीखा ही नहीं।

धर्म-विश्वास

उपाध्यायजी सनातनधर्मावलंबी हिंदू हैं । वैशेषिक दर्शन के इस सूत्र के अनुसार "यतोभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः", आप धर्म की

व्यवस्था करना उत्तम समझते हैं। इसीलिये आप विलायत-यात्रा, पतित के पुनर्ग्रहण और हिंदू-धर्म के विस्तार के पक्षपाती हैं। बालिका-विधवा-विवाह को भी आप बुरा नहीं समझते। किसी मत से द्वेष करना, चाहे वह ईसाई मज़हब या इस्लाम ही क्यों न हो, आपको पसंद नहीं। बरन् समस्त मतों में साम्य-स्थापन आपका दृढ़ सिद्धांत है। यदि इंजील, क़ुरान किंवा किसी साधारण पुस्तक में भी कोई सत् शिक्षा है, तो आप उसको सादर ग्रहण करने के लिये अग्रसर रहते हैं; परंतु उनकी त्रुटियों को लेकर कलह किंवा कोलाहल मचाना अच्छा नहीं समझते। वर्णाश्रम-धर्म के समर्थक होने पर भी नीच वर्ण के हिंदुओं के साथ सद् व्यवहार और उनके उन्नत होने का प्रयत्न करना अपना ही नहीं, वरन् समस्त उच्च हिंदू-समाज का परम कर्तव्य मानते हैं। किसी समय आज़मगढ़ में आर्यसमाज और सना-तनधर्म-सभा में बड़ा विवाद और मनोमालिन्य था। किंतु, ऐसी दशा में भी, आप शांति का

पाठ नहीं भूले। यही कारण है कि आज वहाँ वह विवाद बहुत कुछ शांत है, और प्रत्येक मनुष्य अपने धर्म का पालन करता हुआ अपनी समुन्नति में दत्त-चित्त है। उपाध्यायजी गवर्नमेंट-सर्वेंट होने के कारण पोलिटिकल कार्यों में कोई भाग नहीं लेते; परंतु प्रत्येक सामाजिक और धार्मिक कार्य एवं हिंदू-धर्म के पर्वों और उत्सवों में आप उत्साह के साथ सम्मिलित होते और यथाशक्ति उनके भली भाँति संपादित होने के लिये उद्योग करते हैं। आज़मगढ़ की संस्कृत-पाठशाला और सनातनधर्म-सभा के संचालकों में एक आप भी हैं। इनकी समुन्नति और सफलता का श्रेय बहुत कुछ आप ही को है।

संसार और परिवार

उपाध्यायजी का संसार सुखमय है। आपने जब से होश सँभाला, तब से आज तक आपको संसार में किसी ऐसे कष्ट का सामना नहीं करना पड़ा, जिसे भयंकर कहा जा सके। आपका परिवार भी बृहत् है, और आपने अपने जीवन में

उसे बहुत समुन्नत बनाया है। आपके लघु भ्राता श्रीयुत पं० गुरुसेवकसिंहजी उपाध्याय बी० ए० इस समय इस प्रांत में डिपुटीकलेक्टर हैं। आप आदर्श भ्राता और उपाध्यायजी के समान ही उन्नतमना एवं उदात्त विचारवाले हैं। हाल में आपने विलायत-यात्रा भी की है। इस समय आप कोऑपरेटिव बंक के असिस्टेंट रजिस्ट्रार हैं। उपाध्यायजी के एक पुत्र, एक कन्या, दो पौत्र, दो पौत्री, और डिपुटी साहब के चार पुत्र और एक कन्या है। आपकी भ्रातृ-वधू और पुत्र-वधू भी जीवित हैं; किंतु सहधर्मिणी का स्वर्ग-वास हो गया है। उनका स्वर्ग-वास हुए १६ साल हो गए; परंतु बहुत लोगों के उद्योग करने पर भी आपने अपना दूसरा विवाह नहीं किया। आज आपकी सहचरी सच्चरित्रता और कविता हैं, जो उनको एक सच्ची सहधर्मिणी से कम सुख और शांति नहीं देतीं। जिसने ब्रह्मचर्य का महत्त्व समझा है, उसके लिये पुत्र रहते दूसरा विवाह करना विडंबना छोड़ और कुछ नहीं। वास्तव

में, श्रीयुत बाबू मुकुंदलालजी के कथनानुसार, उपाध्यायजी एक आदर्श पुरुष हैं। आप अपना जीवन, संसार के समस्त कार्यों को करते हुए भी, विरक्त की भाँति व्यतीत करते हैं। इसका गौरव और गर्व समस्त हिंदी-संसार को होना चाहिए। हम लोगों को तो इसका गौरव और गर्व ही नहीं है, वरन् हम लोग उसको अपने लिये एक बड़े महत्त्व की वस्तु समझते हैं; क्योंकि वह हम लोगों को एक स्वर्गीय, समुचित शिक्षा देने के अतिरिक्त समुन्नत भी कर रहा है। अंत में व्रज-भाषा की कतिपय निम्न-लिखित कविताओं के साथ मैं इस लेख को समाप्त करता हूँ—

तेरी ही कला से कलानिधि है कला-निधान,
है सकेलि तेरी केलि कलित पतंग में;
गुरु गिरि-गन हैं तिहारी गुरुता के लहे,
पावन प्रसंग है तिहारो पूत संग में।
हरिऔध तेरी हरियाली से हरे हैं तरु,
तू ही हरि बिहर रहा है हर अंग में;
तेरो रंग ही है रंग-रंग के प्रसूनन में,
तू ही है तरंगित तरंगिनी-तरंग में।

उठो-उठो बीरो, चीरो अरि के करेजन को,
पीरो मुख परे बनी बात हूँ बिगरिहै ;
छटकि-छटकि छाती छगुनी करैयन को,
कौन आज उछरि-उछरिकै पछरिहै ।
हरिऔध कहै बीर बाँकुरे, न बेर करो,
हाँक से तिहारी धीर हू ना धीर धरिहै ;
पारावार-धार में उड़ैगी छार आँच लगे,
ठोकर की मार से पहार गिरि परिहै ।

काम न ऐहै बिकास कबौं, रस-हीनन सों रस-प्यास न जैहै ;
चाहै करै उपबास सदा, कबौं वे बिसवासी-अबास न जैहै ।
कै बन-बास उदास रहै, पै अनेहिन को बनि दास न जैहै ;
पास कपास प्रसूनन के, अलि बास बिलास की आस न जैहै ।

मिलि-मिलि मोदवारी मुकुलित मल्लिका सों,
कुंज-कुंज क्यारिन कलोल करि फूले हौ ;
पान कै प्रकाम रस आम-मंजरीन हू के,
अभिराम उर के अराम उनमूले हौ ।
हरिऔध ठौर-ठौर झाँरि, झुकि, झूमि-झूमि,
चूमि-चूमि कंज की कलीन अनुकूले हौ ;
तजि महमही मंजु मालती, चमेलिन को,
कौन भ्रम बेलिन भँवर आजु भूले हौ ?